

INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES



ISSN 2277 – 9809 (online)

ISSN 2348 - 9359 (Print)

An Internationally Indexed Peer Reviewed & Refereed Journal

www.IRJMSH.com
www.isarasolutions.com

Published by iSaRa Solutions

राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं की भूमिका: एक राजनीतिक विश्लेषणात्मक अध्ययन

(Role of Dalit Women in the National Movement: A Political Analytical Study)

डॉ. बृजेश स्वरूप सोनकर

असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
कर्म क्षेत्र महाविद्यालय, इटावा (उ.प्र.)

सारांश (Abstract)

प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहासलेखन (Historiographical Narrative) में प्रायः उपेक्षित रही दलित महिलाओं की राजनीतिक और सामाजिक भूमिका का एक विश्लेषणात्मक और तथ्य-आधारित अध्ययन प्रस्तुत करता है। 1920 के दशक से लेकर 1947 के स्वतंत्रता प्राप्ति तक, दलित महिलाओं ने न केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध 'मुख्यधारा' के आंदोलन (जैसे-असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा और भारत छोड़ो आंदोलन) में सक्रिय भागीदारी की, बल्कि जातिगत उत्पीड़न और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरुद्ध 'दोहरे संघर्ष' की नींव रखी। प्रस्तुत शोध पत्र महाड़ सत्याग्रह (1927), कालाराम मंदिर सत्याग्रह (1930), और 'अनुसूचित जाति महासंघ' (SCF) के सम्मेलनों में शांताबाई दाणी, मीनाबाल शिवराजन, राधाबाई कांबले और वीरमणि जैसी वीरांगनाओं के राजनीतिक योगदान और आंदोलनों के आंकड़ों का मूल्यांकन करता है। सबाल्टर्न (Subaltern) और नारीवादी-जातिगत (Feminist-Caste) परिप्रेक्ष्य के माध्यम से यह शोध पत्र सिद्ध करता है कि दलित महिलाओं का योगदान केवल सामाजिक सुधार तक सीमित नहीं था, बल्कि यह भारत के लोकतांत्रिक एवं राजनीतिक चेतना के निर्माण का एक आधारभूत स्तंभ था।

मुख्य शब्द (Keywords): दलित महिला आंदोलन, राष्ट्रीय आंदोलन, राजनीतिक चेतना, सबाल्टर्न दृष्टिकोण, डॉ. बी.आर. अंबेडकर, महाड़ सत्याग्रह, दोहरी औपनिवेशिकता।

प्रस्तावना एवं पृष्ठभूमि (Introduction & Background)

A. ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: दोहरे संघर्ष की नींव - औपनिवेशिक भारत में दलित महिलाओं का सामाजिक एवं राजनीतिक यथार्थ अन्य सामाजिक वर्गों की महिलाओं से भिन्न था। जहाँ मुख्यधारा के राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी का केंद्र बिंदु केवल ब्रिटिश शासन से मुक्ति था, वहीं दलित महिलाओं का आंदोलन त्रिस्तरीय उत्पीड़न के विरुद्ध संचालित एक जटिल संघर्ष था।

1. त्रिस्तरीय उत्पीड़न (Triple Oppression) का यथार्थ - दलित महिलाओं को एक साथ तीन संरचनात्मक व्यवस्थाओं के विरुद्ध संघर्ष करना पड़ा:

- औपनिवेशिक व्यवस्था:** साम्राज्यवादी नीतियों और औपनिवेशिक शोषण का प्रभाव, जिससे आर्थिक विपन्नता उत्पन्न हुई।
- जातिगत उत्पीड़न एवं अस्पृश्यता:** सामाजिक व्यवस्था के तहत छुआछूत, सार्वजनिक संसाधनों (जल, मार्ग, शिक्षा) के उपयोग पर प्रतिबंध और शारीरिक-मानसिक शोषण।

- c. **पितृसत्तात्मक संरचना:** समाज और स्वयं के वर्ग के भीतर जेंडर-आधारित असमानता तथा श्रम का असमान विभाजन।
- 2. राजनीतिक जागृति का प्रारंभ (1920 का दशक) - 20वीं शताब्दी के द्वितीय दशक (विशेषकर 1920 के बाद) में भारतीय सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य में बड़ा परिवर्तन आया:**
- a. **डॉ. बी.आर. अंबेडकर का नेतृत्व:** डॉ. अंबेडकर ने स्पष्ट माना कि जब तक दलित समाज की महिलाएं राजनीतिक रूप से जागरूक नहीं होंगी, तब तक अस्पृश्यता उन्मूलन संभव नहीं है। 1920 में प्रारंभ *मूकनायक* और 1927 के *बहिष्कृत भारत* के माध्यम से उन्होंने दलित महिलाओं को शिक्षा और राजनीतिक लामबंदी के लिए प्रेरित किया।
 - b. **पेरियार का आत्म-सम्मान आंदोलन (Self-Respect Movement):** मद्रास प्रेसीडेंसी में पेरियार ई.वी. रामासामी ने 1925 में 'आत्म-सम्मान आंदोलन' की शुरुआत की, जिसमें दलित महिलाओं ने बाल विवाह, देवदासी प्रथा और जातिगत उत्पीड़न के विरुद्ध आंदोलनों का नेतृत्व किया।
 - c. **गांधीवादी आंदोलन:** महात्मा गांधी द्वारा संचालित असहयोग आंदोलन (1920-22) और सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930) के दौरान स्वदेशी और सूत कटाई के माध्यम से भी बड़ी संख्या में दलित महिलाओं ने राजनीतिक गतिविधियों में भागीदारी शुरू की।
- B. प्रमुख सत्याग्रहों और सम्मेलनों में ऐतिहासिक भागीदारी - दलित महिलाओं की भागीदारी केवल मूक समर्थकों के रूप में नहीं थी; उन्होंने आंदोलनों में रणनीतिक योजनाकारों, वक्ताओं और सत्याग्रहियों के रूप में सक्रिय भूमिका निभाई।**
- 1. महाड़ सत्याग्रह (1927) एवं मनुस्मृति दहन**
 - **चवदार तालाब सत्याग्रह (20 मार्च 1927):** रायगढ़ (महाराष्ट्र) के महाड़ में चवदार तालाब से पानी पीने के अधिकार के लिए आयोजित ऐतिहासिक सत्याग्रह में **लगभग 500 से अधिक महिलाओं** ने प्रत्यक्ष रूप से भाग लिया।
 - **25 दिसंबर 1927 का महाड़ सम्मेलन:** जब सवर्ण हिंदुओं के विरोध के बाद पुनः सम्मेलन आयोजित हुआ, तो उसमें **3,000 से अधिक महिलाओं** की उपस्थिति दर्ज की गई।
 - **रणनीतिक भूमिका:** 25 दिसंबर 1927 को आयोजित इस सम्मेलन में डॉ. अंबेडकर ने महिलाओं की एक पृथक सभा को संबोधित किया। इसी सम्मेलन में जब 'मनुस्मृति' का दहन किया गया, तो महिलाओं ने जुलूस की अग्रिम पंक्ति में रहकर विरोध दर्ज कराया।
 - **सांस्कृतिक परिवर्तन:** डॉ. अंबेडकर के आह्वान पर महाड़ सम्मेलन के दौरान ही सैकड़ों दलित महिलाओं ने पारंपरिक तरीके से साड़ी पहनने की अस्पृश्यता-सूचक शैली को छोड़कर मुख्यधारा के समाज की तरह वस्त्र पहनना स्वीकार किया, जो जातिगत हीनता के विरुद्ध एक सशक्त राजनीतिक प्रतीक बना।
 - 2. कालाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह, नासिक (1930-1935)**
 - 2 मार्च 1930 को नासिक में शुरू हुए 'कालाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह' में दलित महिलाओं का योगदान निर्णायक था।

- सत्याग्रह के दौरान जब पुलिस और मंदिर समर्थकों द्वारा लाठीचार्ज किया गया, तब राधाबाई कांबले जैसी महिलाओं के नेतृत्व में महिलाओं ने मंदिर के मुख्य द्वार पर धरना दिया। इस सत्याग्रह में कई महिलाओं को गिरफ्तार किया गया और उन्होंने जेल-यात्राएं कीं।

3. ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस महिला सम्मेलन, नागपुर (20-22 जुलाई 1942)

यह सम्मेलन भारत के राजनीतिक इतिहास में दलित महिलाओं की सबसे बड़ी संगठित राजनीतिक लामबंदी माना जाता है।

- **भागीदारी के आंकड़े:** नागपुर में आयोजित इस सम्मेलन में संपूर्ण भारत (महाराष्ट्र, मध्य प्रांत, मद्रास, संयुक्त प्रांत) से लगभग 25,000 से अधिक दलित महिलाओं ने भाग लिया।
- **अध्यक्षता एवं नेतृत्व:** सम्मेलन की अध्यक्षता तमिलनाडु की प्रमुख दलित नेता मीनाबाल शिवराजन ने की। शांताबाई दाणी, सुलोचनाबाई डोंगरे और सखूबाई मोहिते जैसी नेताओं ने प्रस्तावों का आलेखन एवं वाचन किया।
- **पारित राजनीतिक प्रस्ताव (Key Resolutions):**
 1. **समान मताधिकार:** दलित महिलाओं को बिना किसी संपत्ति संबंधी प्रतिबंध के वयस्क मताधिकार देने की मांग।
 2. **शिक्षा एवं आवास:** दलित बालिकाओं के लिए मुफ्त एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा तथा निःशुल्क छात्रावासों की स्थापना।
 3. **श्रम एवं मजदूरी:** कारखानों व कृषि क्षेत्र में कार्यरत दलित महिला श्रमिकों के लिए समान कार्य हेतु समान वेतन और प्रसूति अवकाश का प्रावधान।
 4. **प्रतिनिधित्व:** स्थानीय निकायों और विधायिकाओं में दलित महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने का प्रस्ताव।

4. भारत छोड़ो आंदोलन (1942) और समानांतर गतिविधियां

जहाँ एक ओर दलित महिलाएं अनुसूचित जाति महासंघ (SCF) के तहत संगठित हो रही थीं, वहीं दूसरी ओर कई दलित महिला कार्यकर्ताओं ने 'भारत छोड़ो आंदोलन' (1942) के दौरान गुप्त रेडियो संचालन, जुलूसों और हड़तालों में भाग लिया। बंबई और नागपुर के कपड़ा मिलों में काम करने वाली दलित महिला श्रमिकों ने औपनिवेशिक शासन और मिल मालिकों के खिलाफ हड़ताल का नेतृत्व किया।

सारणी - 1: प्रमुख सत्याग्रह एवं दलित महिलाओं की भागीदारी

क्र.सं.	ऐतिहासिक घटना / सम्मेलन	वर्ष / स्थान	महिला भागीदारी (लगभग आंकड़े)	प्रमुख महिला नेतृत्व	मुख्य राजनीतिक मांग / उपलब्धि
1.	महाड़ सत्याग्रह	1927 (महाराष्ट्र)	3,000+	शांताबाई दाणी, गुफाबाई	सार्वजनिक जल स्रोतों का अधिकार एवं मनुस्मृति दहन

2.	कालाराम मंदिर सत्याग्रह	1930 (नासिक)	500+ (सत्याग्रही)	राधाबाई कांबले	नागरिक एवं धार्मिक समानता, जेल-यात्राएं
3.	नागपुर महिला सम्मेलन	1942 (नागपुर)	25,000	मीनांबाल शिवराजन, सुलोचनाबाई डोंगरे	वयस्क मताधिकार, समान वेतन, शिक्षा एवं आरक्षण
4.	आत्म-सम्मान आंदोलन	1925-1940 (तमिलनाडु)	हजारों की संख्या में	मवलूर राममृतम, अन्नै मीनांबाल	जाति-विरोधी विवाह, पितृसत्ता का विरोध

शोध की आवश्यकता एवं महत्व (Rationale & Significance of the Study)

- **अकादमिक महत्व:** पारंपरिक इतिहास लेखन में राष्ट्रीय आंदोलन को मुख्य रूप से उच्च-जातीय और पुरुष-केंद्रित दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। यह शोध पत्र 'नीचे से इतिहास' (History from Below / Subaltern Study) प्रस्तुत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।
- **राजनीतिक प्रासंगिकता:** आधुनिक भारत में महिलाओं और सीमांत वर्गों के राजनीतिक सशक्तिकरण, प्रतिनिधित्व (Representation) और मताधिकार के विकासक्रम को समझने के लिए इस अध्ययन की अत्यंत आवश्यकता है।

शोध के उद्देश्य (Objectives of the Study)

1. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और नेतृत्व के स्वरूप का तथ्यात्मक विश्लेषण करना।
2. मुख्यधारा के राष्ट्रीय आंदोलन (कांग्रेस चालित) तथा डॉ. अंबेडकर एवं पेरियार के नेतृत्व वाले आंदोलनों में दलित महिलाओं की दोहरी भूमिका का अध्ययन करना।
3. प्रमुख दलित महिला नेताओं (उदा. मीनांबाल शिवराजन, शांताबाई दाणी, अन्नपूर्णाबाई देशमुख) के राजनीतिक योगदान को रेखांकित करना।
4. दलित महिलाओं द्वारा उठाई गई राजनीतिक एवं नागरिक अधिकारों संबंधी मांगों का आधुनिक लोकतांत्रिक ढांचे पर पड़े प्रभाव का आकलन करना।

शोध प्रश्न (Research Questions)

1. औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं की राजनीतिक लामबंदी (Political Mobilization) का स्वरूप क्या था?
2. राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान दलित महिलाओं ने 'जाति' और 'लिंग' (Caste & Gender) के अंतर-संबद्ध मुद्दों को राजनीतिक मंचों पर किस प्रकार प्रस्तुत किया?
3. नागपुर सम्मेलन (1942) और अन्य क्षेत्रीय आंदोलनों के माध्यम से दलित महिलाओं ने अपने लिए कौन-कौन सी राजनीतिक मांगें रखीं?
4. आधुनिक राजनीति विज्ञान के संदर्भ में दलित महिलाओं के इस ऐतिहासिक योगदान की क्या प्रासंगिकता है?

प्राक्कल्पना (Hypothesis)

राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं की भागीदारी केवल औपनिवेशिक शासन के विरोध तक सीमित नहीं थी, बल्कि उनकी राजनीतिक लामबंदी ने स्वतंत्रता संग्राम को एक समावेशी एवं सामाजिक-न्याय आधारित चरित्र प्रदान किया, जिसके बिना भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की लोकतांत्रिक चेतना अधूरी रहती।

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य (Theoretical Framework)

प्रस्तुत शोध कार्य में 'राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं की राजनीतिक भूमिका' का गहन विश्लेषण करने के लिए तीन प्रमुख अकादमिक सिद्धांतों को आधार बनाया गया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि दलित महिलाओं के ऐतिहासिक योगदान को केवल किसी एक पारंपरिक राजनीतिक सिद्धांत के दायरे में रखकर नहीं समझा जा सकता, बल्कि इसके लिए बहु-सैद्धांतिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

1. सबाल्टर्न परिप्रेक्ष्य (Subaltern Perspective)

- **सैद्धांतिक आधार:** रंजीत गुहा (Ranjit Guha) और गायत्री चक्रवर्ती स्पिवाक (Gayatri Chakravorty Spivak) द्वारा विकसित 'सबाल्टर्न अध्ययन' (Subaltern Studies) दृष्टिकोण यह मानता है कि इतिहासलेखन में प्रायः समाज के निचले या हाशिये पर स्थित वर्गों की आवाज़ और उनकी राजनीतिक सक्रियता को अनदेखा कर दिया जाता है।
- **शोध में व्यावहारिक अनुप्रयोग एवं निष्कर्ष:**
 - इस शोध के निष्कर्षों से यह सिद्ध हुआ है कि राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान दलित महिलाओं की लामबंदी केवल उच्च-जातीय नेताओं या औपनिवेशिक शासकों के इशारे पर नहीं हुई थी, बल्कि उनकी अपनी एक स्वतंत्र राजनीतिक चेतना (Autonomous Political Consciousness) थी।
 - 1927 के महाड़ सत्याग्रह और 1930 के कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलनों में दलित महिलाओं ने औपनिवेशिक सत्ता के साथ-साथ समाज के प्रभुत्वशाली सवर्ण आख्यानो (Elite Narratives) को भी सीधी चुनौती दी। उन्होंने इतिहास में अपनी भूमिका स्वयं दर्ज कराई, जिससे यह सिद्ध होता है कि सबाल्टर्न वर्ग मूक दर्शक नहीं, बल्कि सक्रिय राजनीतिक कर्ता (Political Agent) था।

2. अंतर-अनुभागीयता का सिद्धांत (Theory of Intersectionality)

- **सैद्धांतिक आधार:** किम्बरले क्रैन्शॉ (Kimberlé Crenshaw) द्वारा प्रतिपादित 'अंतर-अनुभागीयता' का सिद्धांत यह समझाता है कि जब कोई व्यक्ति या समूह एक साथ कई प्रकार के भेदभावों (जैसे- जाति, लिंग और वर्ग) का शिकार होता है, तो उसका अनुभव सामान्य से पूरी तरह भिन्न और अधिक जटिल होता है।
- **शोध में व्यावहारिक अनुप्रयोग एवं निष्कर्ष:**
 - इस अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि दलित महिलाओं का राजनीतिक संघर्ष केवल पुरुषों के खिलाफ ('जेंडर आधारित') या केवल अंग्रेजों के खिलाफ ('राष्ट्रीय आंदोलन') नहीं था। वे एक

साथ तीन मोर्चों पर संघर्ष कर रही थीं: ब्रिटिश औपनिवेशिकता, आंतरिक जातिगत छुआछूत और पितृसत्तात्मक उत्पीड़न।

- नागपुर के 1942 के सम्मेलन (ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस महिला सम्मेलन) के आंकड़ों और प्रस्तावों का विश्लेषण करने पर यह सामने आया कि दलित महिलाओं ने अपने अधिकारों की मांग करते समय जाति और जेंडर—दोनों पहचानों को एक साथ राजनीतिक मंच पर रखा। उन्होंने स्पष्ट किया कि केवल स्वतंत्रता मिल जाने से उनकी स्थिति में सुधार नहीं होगा, जब तक कि जातिगत और लैंगिक असमानता का अंत न हो।

3. संवैधानिक एवं अधिकार-आधारित दृष्टिकोण (Rights-Based & Constitutional Approach)

- **सैद्धांतिक आधार:** राजनीति विज्ञान का यह दृष्टिकोण राज्य, नागरिकता, प्रतिनिधित्व (Representation) और संवैधानिक अधिकारों के संदर्भ में सामाजिक आंदोलनों का मूल्यांकन करता है।
- **शोध में व्यावहारिक अनुप्रयोग एवं निष्कर्ष:**
 - शोध में यह देखा गया कि 1930 और 1940 के दशकों में दलित महिला नेताओं (जैसे—मीनांबाल शिवराजन, शांताबाई दाणी) ने केवल प्रतीकात्मक विरोध दर्ज नहीं कराया, बल्कि औपचारिक राजनीतिक संरचनाओं में हिस्सेदारी मांगी।
 - उन्होंने **वयस्क मताधिकार (Universal Adult Suffrage)**, **समान काम के लिए समान वेतन**, **मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा**, तथा **विधायिकाओं में महिलाओं के लिए प्रतिनिधित्व** जैसी मांगों को जापान और प्रस्तावों के रूप में औपनिवेशिक सरकार और राष्ट्रीय नेताओं के समक्ष रखा।

4. सैद्धांतिक विश्लेषण

शोध के पूर्ण होने के पश्चात यह निष्कर्ष निकलता है कि **सबाल्टर्न दृष्टिकोण** ने दलित महिलाओं की छिपी हुई राजनीतिक आवाज़ को उभारने का काम किया, **अंतर-अनुभागीयता सिद्धांत** ने उनके त्रिस्तरीय संघर्ष की गहराई को रेखांकित किया, और **संवैधानिक दृष्टिकोण** ने यह स्पष्ट किया कि किस प्रकार दलित महिलाओं की मांगों ने स्वतंत्र भारत के लोकतांत्रिक व समावेशी संविधान की आधारशिला रखने में योगदान दिया।

साहित्य की समीक्षा (Review of Literature)

राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं की राजनीतिक और सामाजिक भूमिका को समझने के लिए तीन प्रमुख श्रेणियों—शास्त्रीय ग्रंथ, अकादमिक शोध पत्र और प्राथमिक ऐतिहासिक दस्तावेजों की समीक्षा की गई है:

1. प्रमुख ग्रंथ एवं शोध पुस्तकें (Major Books & Monographs)

- **गेल ओमवेड (*Dalits and the Democratic Revolution: Dr. Ambedkar and the Dalit Movement in Colonial India*, 1994):**

गेल ओमवेड का शोध औपनिवेशिक भारत में पश्चिमी और दक्षिणी भारत (विशेषकर महाराष्ट्र और मद्रास प्रेसीडेंसी) के आंदोलनों पर केंद्रित है। ओमवेड यह स्पष्ट करती हैं कि 1920 के बाद के आंदोलनों में दलित महिलाओं की उपस्थिति केवल सांकेतिक (Tokenistic) नहीं थी, बल्कि वे ग्रामीण

व शहरी क्षेत्रों में जन-सभाओं और हड़तालों का नेतृत्व कर रही थीं। उन्होंने रेखांकित किया कि महाड़ सत्याग्रह (1927) और 'अनुसूचित जाति महासंघ' (SCF) की लामबंदी ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को व्यापक लोकतांत्रिक आधार प्रदान किया।

- **शर्मिला रीगे (*Writing Caste/Writing Gender: Narrating Dalit Women's Testimonies*, 2006):**

रीगे का कार्य समाजशास्त्रीय और राजनीतिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने "दलित नारीवादी परिप्रेक्ष्य" (Dalit Feminist Standpoint) की अवधारणा प्रस्तुत की। रीगे का तर्क है कि मुख्यधारा का भारतीय नारीवाद (जो मुख्यतः उच्च-जातीय मध्यमवर्गीय महिलाओं तक सीमित था) और मुख्यधारा का दलित आंदोलन (जो अक्सर पुरुष-केंद्रित रहा) दोनों ही दलित महिलाओं की विशिष्ट राजनीतिक चुनौतियों—जाति, वर्ग और जेंडर के त्रिस्तरीय उत्पीड़न—को संबोधित करने में विफल रहे।

- **उर्मिला पवार एवं मीनाक्षी मून (*आम्हीही इतिहास घडवला / We Also Made History*, 1989):**

यह ग्रंथ अंबेडकरी आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी का सबसे प्रामाणिक प्राथमिक दस्तावेज माना जाता है। पवार और मून ने 1930 से 1950 के दशकों के दौरान सक्रिय दर्जनों दलित महिला कार्यकर्ताओं के साक्षात्कार, भाषण, डायरियां और जेल-यात्राओं के रिकॉर्ड संकलित किए। यह पुस्तक यह सिद्ध करती है कि शांताबाई दाणी, सुलोचनाबाई डोंगरे, और राधाबाई कांबले जैसी नेताओं ने केवल सामाजिक सुधार नहीं किया, बल्कि वे राजनीतिक सम्मेलनों में बाकायदा प्रस्ताव तैयार करती थीं और पारित कराती थीं।

- **इलेन ज़ेलियट (*From Untouchable to Dalit: Essays on the Ambedkar Movement*, 1996):**

ज़ेलियट ने अपने अध्ययनों में दर्शाया कि डॉ. अंबेडकर के सामाजिक-राजनीतिक आंदोलनों में महिलाओं की शिक्षा और मताधिकार की मांग किस प्रकार केंद्रीय स्तंभ थी। 1942 के नागपुर सम्मेलन में 25,000 दलित महिलाओं का जुटना ज़ेलियट के अनुसार औपनिवेशिक दक्षिण एशिया के इतिहास में महिलाओं का सबसे बड़ा स्वतंत्र राजनीतिक समागम था।

2. अकादमिक शोध पत्र एवं जर्नल लेख (Academic Journal Articles)

- **गोपाल गुरु (*Dalit Women Talk Differently*, Economic and Political Weekly, 1995):**

प्रो. गोपाल गुरु का यह ऐतिहासिक लेख यह स्पष्ट करता है कि दलित महिलाओं की राजनीतिक आवाज और मुद्दे सवर्ण महिलाओं के मुद्दों से पूरी तरह भिन्न थे। जहाँ मुख्यधारा की महिलाएं मुख्य रूप से 'स्वदेशी' और 'ब्रिटिश शासन से मुक्ति' पर केंद्रित थीं, वहीं दलित महिलाएं इसके साथ-साथ 'नागरिक अधिकार', 'अस्पृश्यता उन्मूलन' और 'सुरक्षा' की मांग कर रही थीं।

- **अनुपमा राव (*Gendering Caste: Contemporary Feminist Studies*, 2003):**

अनुपमा राव का शोध यह दर्शाता है कि औपनिवेशिक काल में कानूनी और संवैधानिक सुधारों (जैसे—1935 का भारत सरकार अधिनियम और गोलमेज सम्मेलन) के दौरान दलित महिलाओं ने किस प्रकार अपने पृथक प्रतिनिधित्व और मताधिकार के अधिकारों की वकालत की।

शोध अंतराल (Research Gap)

विद्यमान अकादमिक साहित्य की विस्तृत समीक्षा के पश्चात निम्नलिखित महत्वपूर्ण शोध अंतराल (Research Gaps) चिन्हित किए गए हैं, जिन्हें यह शोध पत्र संबोधित करता है:

1. **मुख्यधारा इतिहासलेखन का एकांगी दृष्टिकोण** - भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के पारंपरिक इतिहासलेखन में (चाहे वह राष्ट्रवादी आख्यान हो या वामपंथी इतिहास) दलित महिलाओं के योगदान को प्रायः 'सामाजिक सुधार के मूक लाभार्थियों' या मुख्यधारा के सत्याग्रहों में केवल 'सहायक/पूरक कार्यकर्ताओं' (Passive Participants) के रूप में देखा गया है। उनकी **स्वतंत्र राजनीतिक विचारधारा और स्वायत्त चेतना** को पर्याप्त स्थान नहीं मिला है।
2. **स्वतंत्र राजनीतिक नेतृत्व और संगठनात्मक कौशल की उपेक्षा** - पूर्ववर्ती शोधों में दलित महिलाओं के केवल व्यक्तिगत संघात या सामाजिक उपदेशों का उल्लेख मिलता है। 1930-1947 के दौरान गठित 'अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महिला सम्मेलन' जैसे संगठनों, उनके द्वारा पारित संवैधानिक प्रस्तावों, और उनकी स्वतंत्र वक्ताओं व आयोजकों की भूमिका का तथ्यात्मक व आंकड़ों पर आधारित विश्लेषणात्मक अध्ययन अकादमिक जगत में अत्यंत सीमित है।
3. **आंकड़ों एवं प्राथमिक दस्तावेजों का अभाव** - विद्यमान शोध पत्र अक्सर सैद्धांतिक तर्कों तक सीमित रह जाते हैं। औपनिवेशिक गृह प्रभाग (Home Department) के रिकॉर्ड, 1940 के दशक की पत्र-पत्रिकाओं (*जनता*, *बहिष्कृत भारत*) में प्रकाशित महिला सम्मेलनों की वाहवाही और प्रस्तावों के तथ्यात्मक आंकड़ों को राजनीतिक विश्लेषण के साथ एकीकृत करने वाले अद्यतन शोधों की कमी है।

दलित महिलाओं के आंदोलन को केवल सामाजिक सुधार के दायरे से निकालकर, उसे **राजनीतिक स्वायत्तता, संवैधानिक मांगों, राजनीतिक लामबंदी और सबाल्टर्न राजनीतिक चेतना** के एक अनिवार्य और संरचनात्मक घटक के रूप में पुनर्स्थापित करके इस शोध अंतराल को भरने का प्रयास करता है।

शोध पद्धति (Research Methodology)

- **शोध का प्रकार:** गुणात्मक (Qualitative), विश्लेषणात्मक (Analytical) एवं ऐतिहासिक-तुलनात्मक (Historical-Comparative) शोध।
- **आंकड़ों के स्रोत:**
 - **प्राथमिक स्रोत (Primary Sources):** स्वतंत्रता पूर्व की पत्र-पत्रिकाएं (जैसे—*मूकनायक*, *बहिष्कृत भारत*, *जनता*), 1942 के नागपुर सम्मेलन के पारित प्रस्ताव, ब्रिटिश कालीन गृह विभाग की रिपोर्टें और समकालीन भाषणों के अभिलेख।
 - **द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources):** प्रतिष्ठित अकादमिक पत्रिकाओं (*Economic and Political Weekly*, *Studies in History*) में प्रकाशित लेख, ऐतिहासिक पुस्तकें और शोध ग्रंथ।

मुख्य विश्लेषण

1. **प्रस्तावना, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं सबाल्टर्न चेतना का उदय** - औपनिवेशिक भारत में दलित महिलाओं की सामाजिक-राजनीतिक स्थिति को केवल स्त्री-वंचना के सामान्य संदर्भ में समझना पर्याप्त नहीं है।

उनकी स्थिति जाति, वर्ग और लिंग-तीनों स्तरों पर विद्यमान असमानताओं से निर्मित होती थी। अस्पृश्यता, सार्वजनिक संसाधनों तक सीमित पहुँच, शिक्षा से वंचना, आर्थिक निर्भरता तथा पितृसत्तात्मक सामाजिक संरचना ने उनके सार्वजनिक जीवन में प्रवेश को कठिन बनाया। इस कारण दलित महिलाओं की राजनीतिक चेतना का विकास मुख्यधारा के महिला आंदोलन से अलग परिस्थितियों में हुआ। आधुनिक शोध में यह भी रेखांकित किया गया है कि दलित महिलाओं को अपनी विशिष्ट सामाजिक स्थिति के कारण दलित पुरुषों और गैर-दलित महिलाओं-दोनों से अलग अनुभवों के आधार पर राजनीतिक संगठन की आवश्यकता महसूस हुई। 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में शिक्षा, मुद्रित साहित्य, सामाजिक सुधार आंदोलनों तथा जाति-विरोधी संगठनों के विस्तार ने वंचित समुदायों में नई सार्वजनिक चेतना को जन्म दिया। उत्तर भारत में दलित सार्वजनिक क्षेत्र के निर्माण तथा महाराष्ट्र में फुले-अंबेडकरी परंपरा ने जाति-विरोधी राजनीतिक भाषा को विकसित किया। 1919 के भारत शासन अधिनियम के बाद प्रतिनिधित्व और पृथक निर्वाचन जैसे प्रश्नों पर दलित संगठनों ने अपनी राजनीतिक माँगें सामने रखनी शुरू कीं। इस प्रक्रिया ने दलित समुदाय को केवल सामाजिक सुधार के लाभार्थी के रूप में नहीं, बल्कि राजनीतिक अधिकारों के दावेदार के रूप में स्थापित करने में योगदान दिया।

इस संदर्भ में दलित महिलाओं की चेतना को सबाल्टर्न चेतना के रूप में समझा जा सकता है। यहाँ राजनीतिक चेतना का अर्थ केवल औपनिवेशिक शासन का विरोध नहीं था, बल्कि सार्वजनिक जलस्रोतों, मंदिरों, शिक्षा, सम्मान, प्रतिनिधित्व और सामाजिक समानता जैसे अधिकारों के लिए सामूहिक संघर्ष भी था। इसलिए दलित महिलाओं का राजनीतिक प्रवेश राष्ट्रीय मुक्ति के साथ-साथ सामाजिक मुक्ति की माँग से भी जुड़ा हुआ था।

2. राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं का पदार्पण एवं राजनीतिक लामबंदी (1920-1935) - 1920

के बाद भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के जनाधार में व्यापक विस्तार हुआ। असहयोग आंदोलन और बाद में सविनय अवज्ञा आंदोलन ने महिलाओं को सार्वजनिक राजनीतिक गतिविधियों में आने का अवसर प्रदान किया। सामान्य महिला आंदोलन के स्तर पर विदेशी वस्त्रों और शराब की दुकानों पर धरना, सभाओं का आयोजन, जुलूस तथा गिरफ्तारियाँ राजनीतिक भागीदारी के महत्वपूर्ण माध्यम बने। सविनय अवज्ञा आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी पहले की अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक हुई।

लेकिन दलित महिलाओं की भागीदारी को केवल कांग्रेस के राष्ट्रीय आंदोलन की व्यापक महिला भागीदारी के भीतर रखकर देखना ऐतिहासिक रूप से अधूरा होगा। दलित समुदाय के सामने राष्ट्रीय स्वतंत्रता के साथ-साथ अस्पृश्यता और सामाजिक बहिष्कार का प्रश्न भी था। कांग्रेस ने 1917 से अस्पृश्यता-निवारण को अपने कार्यक्रम में स्थान देना शुरू किया और 1920 के नागपुर अधिवेशन में भी इस प्रश्न को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ा गया; फिर भी दलित नेतृत्व ने सामाजिक समानता और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के प्रश्नों को स्वतंत्र रूप से उठाया। महाइ सत्याग्रह (1927) इस प्रक्रिया का महत्वपूर्ण उदाहरण था। सार्वजनिक जलस्रोत तक पहुँच के प्रश्न ने नागरिक अधिकार को प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्ष में बदल दिया। उपलब्ध स्रोतों में महाइ आंदोलन में बड़ी संख्या में महिलाओं की भागीदारी का उल्लेख मिलता है। यह भागीदारी केवल दर्शक के रूप में नहीं थी; महिलाओं ने सभाओं, जुलूसों और सामुदायिक लामबंदी में सक्रिय भूमिका निभाई।

इसी प्रकार 1930 में नासिक के कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी ने यह स्पष्ट किया कि धार्मिक-सामाजिक बहिष्कार के विरुद्ध संघर्ष में दलित महिलाएँ स्वयं राजनीतिक कर्ता के रूप में सामने आ रही थीं। उपलब्ध विवरणों में पाँच सौ से अधिक महिलाओं की भागीदारी और कुछ महिलाओं के जेल जाने का उल्लेख मिलता है। राधाबाई वदल जैसी कार्यकर्ताओं ने सार्वजनिक रूप से अपने समुदाय के सम्मान और अधिकारों की माँग को अभिव्यक्त किया। इस प्रकार 1920-1935 के बीच दलित महिलाओं की राजनीतिक लामबंदी दो समानांतर प्रक्रियाओं से विकसित हुई—एक ओर औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राष्ट्रीय आंदोलन और दूसरी ओर जाति-आधारित सामाजिक बहिष्कार के विरुद्ध अधिकार-आधारित आंदोलन। यही द्विस्तरीय संघर्ष आगे चलकर दलित महिला राजनीति की विशिष्ट पहचान का आधार बना।

3. अंबेडकरी आंदोलन, पेरियार का आत्म-सम्मान आंदोलन एवं दलित महिलाओं की स्वतंत्र राजनीति (1935-1947) -

1935 के बाद दलित राजनीति में प्रतिनिधित्व, राजनीतिक अधिकार और स्वतंत्र संगठन का प्रश्न और अधिक महत्वपूर्ण हो गया। डॉ. बी. आर. अंबेडकर ने दलित समुदाय को राजनीतिक रूप से संगठित करने के साथ महिलाओं की सामाजिक और राजनीतिक भागीदारी पर भी बल दिया। महिलाओं के संगठन, सम्मेलन और आंदोलनों में उनकी भागीदारी को अंबेडकरी आंदोलन की संगठनात्मक रणनीति का हिस्सा बनाया गया। इससे दलित महिलाओं की भूमिका केवल सामाजिक सुधार तक सीमित न रहकर राजनीतिक अधिकारों और सामुदायिक प्रतिनिधित्व से जुड़ी। 1942 का नागपुर सम्मेलन इस राजनीतिक संगठन प्रक्रिया में महत्वपूर्ण था। 17-20 जुलाई 1942 को नागपुर में अखिल भारतीय डिप्रेसड क्लासेस सम्मेलन हुआ और 19 जुलाई को अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ की स्थापना का प्रस्ताव पारित किया गया। इसके बाद महासंघ का संविधान सार्वजनिक हुआ। इसी समय अनुसूचित जाति महिला संगठनों और सम्मेलनों ने दलित महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी को अलग संगठनात्मक स्वरूप प्रदान करने का प्रयास किया। उपलब्ध दलित महिला इतिहासलेखन में 1942 के सम्मेलन को महिलाओं की राजनीतिक लामबंदी के महत्वपूर्ण चरण के रूप में रेखांकित किया गया है। दक्षिण भारत में पेरियार ई. वी. रामासामी के नेतृत्व वाला आत्म-सम्मान आंदोलन एक अलग लेकिन संबंधित राजनीतिक-सामाजिक धारा के रूप में विकसित हुआ। 1926 में संगठित आत्म-सम्मान आंदोलन ने जातिगत पदानुक्रम, ब्राह्मणवादी वर्चस्व, धार्मिक रूढ़ियों तथा पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था की आलोचना की। आंदोलन ने महिलाओं की स्वतंत्रता, विवाह-संबंधी सुधार और सामाजिक समानता को भी अपने कार्यक्रम से जोड़ा। पेरियार की राजनीति में महिलाओं की मुक्ति को केवल राष्ट्रीय स्वतंत्रता के बाद का प्रश्न नहीं माना गया, बल्कि सामाजिक समानता की तत्काल आवश्यकता के रूप में देखा गया। आत्म-सम्मान आंदोलन ने इस प्रकार दक्षिण भारत में जाति-विरोधी तथा पितृसत्ता-विरोधी राजनीतिक चेतना के विकास के लिए एक वैकल्पिक मंच उपलब्ध कराया। हालांकि अंबेडकरी आंदोलन और आत्म-सम्मान आंदोलन की ऐतिहासिक परिस्थितियाँ, संगठनात्मक संरचनाएँ और राजनीतिक लक्ष्य पूरी तरह समान नहीं थे; दोनों को दलित महिलाओं की स्वतंत्र राजनीतिक चेतना के निर्माण में समानार्थी मानना उचित नहीं होगा।

4. प्रमुख दलित महिला नेताओं का विश्लेषणात्मक अध्ययन एवं नेतृत्व संरचना -

दलित महिला राजनीति के इतिहास में महिलाओं की भूमिका केवल सामूहिक भागीदारी तक सीमित नहीं रही। कुछ महिलाओं ने संगठन निर्माण, सार्वजनिक भाषण, सत्याग्रह, राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा सामाजिक सुधार के क्षेत्रों में

नेतृत्व की भूमिका निभाई। **मीनांबाल शिवराज** का योगदान विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। वे मद्रास प्रेसीडेंसी की दलित राजनीति में सक्रिय रहीं और बाद में अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ से जुड़ीं। उनके राजनीतिक जीवन से यह संकेत मिलता है कि दक्षिण भारत की दलित महिला राजनीति स्थानीय सामाजिक प्रश्नों से आगे बढ़कर अखिल भारतीय राजनीतिक संगठनों से भी जुड़ रही थी। इस प्रकार महिला नेतृत्व ने दलित राजनीति के क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तरों के बीच एक सेतु का कार्य किया। **शांताबाई दाणी** अंबेडकरी आंदोलन की प्रमुख महिला कार्यकर्ताओं में थीं। उपलब्ध स्रोतों में उनके राजनीतिक सक्रियता, आंदोलनों में नेतृत्व तथा बाद के विधायी जीवन का उल्लेख मिलता है। 1946 में उन्होंने पूना समझौते के विरोध से संबंधित एक आंदोलन का नेतृत्व किया और स्वतंत्रता के बाद 1968-1974 के दौरान महाराष्ट्र विधान सभा की सदस्य रहीं। इससे स्पष्ट होता है कि दलित महिला राजनीतिक सक्रियता आंदोलनात्मक राजनीति से संस्थागत राजनीति तक विस्तृत हुई। **राधाबाई वदल** जैसी कार्यकर्ताओं की भूमिका अलग प्रकार की थी। कालाराम मंदिर आंदोलन के दौरान उनके सार्वजनिक वक्तव्य यह दिखाते हैं कि दलित महिलाएँ अपने अनुभवों को स्वयं राजनीतिक भाषा में व्यक्त कर रही थीं। इस प्रकार नेतृत्व केवल औपचारिक पद प्राप्त करने तक सीमित नहीं था, बल्कि सार्वजनिक भाषण और सामूहिक प्रतिरोध भी राजनीतिक नेतृत्व के महत्वपूर्ण रूप थे।

इसके अतिरिक्त महाराष्ट्र में अनेक महिला कार्यकर्ताओं ने सत्याग्रह, श्रमिक आंदोलनों, संगठनात्मक गतिविधियों और सामाजिक जागरण में योगदान दिया। इन महिलाओं के योगदान का अध्ययन यह प्रश्न भी उठाता है कि इतिहासलेखन में नेतृत्व की परिभाषा कितनी व्यापक होनी चाहिए। केवल चुनाव जीतने या औपचारिक पद प्राप्त करने वाली महिलाओं को नेतृत्वकर्ता मानने के बजाय आंदोलन का संगठन करने वाली, भाषण देने वाली, जेल जाने वाली तथा समुदाय को लामबंद करने वाली महिलाओं को भी राजनीतिक नेतृत्व की श्रेणी में शामिल करना आवश्यक है।

5. औपनिवेशिक अभिलेख, प्रस्ताव एवं संवैधानिक-नागरिक अधिकारों की माँगें - दलित महिलाओं की राजनीतिक चेतना का अध्ययन केवल आत्मकथाओं या बाद के इतिहासलेखन से नहीं किया जा सकता। इसके लिए औपनिवेशिक अभिलेख, राजनीतिक संगठनों के प्रस्ताव, महिला सम्मेलनों के दस्तावेज, समाचार-पत्र, ज्ञापन तथा संवैधानिक सुधारों से संबंधित अभिलेख महत्वपूर्ण प्राथमिक स्रोत हैं। 1930 और 1940 के दशकों में राजनीतिक प्रतिनिधित्व, मताधिकार, शिक्षा, सार्वजनिक सुविधाओं तक पहुँच तथा सामाजिक भेदभाव के प्रश्नों पर विभिन्न संगठनों ने अपनी माँगें प्रस्तुत कीं। दलित राजनीति में पृथक निर्वाचन, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और संवैधानिक सुरक्षा का प्रश्न विशेष महत्व रखता था। 1942 में अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ की स्थापना ने इस राजनीतिक माँग को संगठित राष्ट्रीय मंच प्रदान किया। दलित महिलाओं के संदर्भ में इन दस्तावेजों का महत्व इसलिए अधिक है क्योंकि वे यह समझने में सहायता करते हैं कि महिलाएँ केवल पुरुष नेताओं के आंदोलनों की सहभागी थीं या उन्होंने स्वयं विशिष्ट राजनीतिक माँगों को अभिव्यक्त किया। उपलब्ध सामग्री से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षा, सामाजिक सम्मान, सार्वजनिक जीवन में भागीदारी और समान नागरिक अधिकारों के प्रश्न महिला राजनीतिक चेतना का हिस्सा बन रहे थे।

6. निष्कर्ष, मूल्यांकन एवं आधुनिक राजनीति विज्ञान में प्रासंगिकता - उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्यों के विश्लेषण से यह सामने आता है कि औपनिवेशिक भारत की दलित महिलाओं का राजनीतिक संघर्ष केवल

ब्रिटिश शासन के विरुद्ध राष्ट्रीय संघर्ष तक सीमित नहीं था। उनके लिए सामाजिक सम्मान, अस्पृश्यता से मुक्ति, सार्वजनिक संसाधनों तक पहुँच, शिक्षा, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और लैंगिक समानता भी राजनीतिक प्रश्न थे। इस अर्थ में उनका संघर्ष औपनिवेशिक सत्ता तथा भारतीय समाज के भीतर मौजूद जातिगत-पितृसत्तात्मक असमानताओं-दोनों के संदर्भ में विकसित हुआ। महाड़ और कालाराम जैसे आंदोलनों ने नागरिक अधिकारों को प्रत्यक्ष सामूहिक संघर्ष का विषय बनाया, जबकि अंबेडकरी संगठनों और महिला सम्मेलनों ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा संगठनात्मक भागीदारी को आगे बढ़ाया। दूसरी ओर आत्म-सम्मान आंदोलन ने दक्षिण भारत में जाति-विरोध और महिला मुक्ति को व्यापक सामाजिक परिवर्तन के प्रश्न से जोड़ा। इन विभिन्न धाराओं ने मिलकर दलित महिलाओं के लिए राजनीतिक सार्वजनिक क्षेत्र के विस्तार में योगदान किया। आधुनिक राजनीति विज्ञान की दृष्टि से इस इतिहास का महत्व **दलित नारीवादी दृष्टिकोण** के विकास से जुड़ा है। यह दृष्टिकोण इस बात पर बल देता है कि जाति और लिंग को अलग-अलग सामाजिक श्रेणियों के रूप में देखने से दलित महिलाओं के अनुभव की पूर्ण व्याख्या नहीं हो सकती। उनकी राजनीतिक स्थिति को जाति, वर्ग, लिंग और सत्ता-संबंधों के अंतर्संबंधों में समझना आवश्यक है।

इसलिए औपनिवेशिक काल की दलित महिला राजनीति को केवल “राष्ट्रीय आंदोलन में महिलाओं की भागीदारी” के एक उपखंड के रूप में देखना पर्याप्त नहीं है। यह भारतीय लोकतांत्रिक राजनीति के उस ऐतिहासिक विकास का हिस्सा थी जिसमें वंचित समुदायों ने **नागरिकता, समानता, प्रतिनिधित्व और सम्मान** को राजनीतिक अधिकारों के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया। इसी कारण दलित महिलाओं का ऐतिहासिक योगदान आज के समावेशी लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और प्रतिनिधित्व की बहस को समझने के लिए महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव (Conclusion & Recommendations)

प्रस्तुत शोध पत्र का विश्लेषण यह स्पष्ट करता है कि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास केवल औपनिवेशिक सत्ता के विरोध या मुख्यधारा के उच्च-जातीय व पुरुष-केंद्रित आख्यानो तक सीमित नहीं था। दलित महिलाओं की राजनीतिक सहभागिता ने स्वतंत्रता संग्राम को एक बहुआयामी और सामाजिक-न्याय आधारित चरित्र प्रदान किया।

1. प्राक्कल्पना का सत्यापन (Verification of Hypothesis)

अध्ययन के आंकड़े और ऐतिहासिक दस्तावेज शोध पत्र की प्राक्कल्पना को पूर्णतः सिद्ध करते हैं:

- **समावेशी स्वतंत्रता संग्राम:** दलित महिलाओं की लामबंदी केवल अंग्रेजों को भारत से बाहर निकालने तक सीमित नहीं थी। उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि 'स्वतंत्रता' का अर्थ केवल विदेशी शासन का अंत न हो, बल्कि वह आंतरिक जातिगत छुआछूत और जेंडर-आधारित उत्पीड़न से भी मुक्ति दिलाए।
- **लोकतांत्रिक चेतना की आधारशिला:** 1927 के महाड़ सत्याग्रह, 1930 के कालाराम मंदिर प्रवेश आंदोलन, और 1942 के नागपुर सम्मेलन में दलित महिलाओं की व्यापक उपस्थिति (25,000+) और सक्रिय भागीदारी ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन को एक वास्तविक 'सबाल्टर्न' (Subaltern) और लोकतांत्रिक स्वरूप प्रदान किया।

2. शोध उद्देश्यों एवं प्रश्नों का संश्लेषणात्मक निष्कर्ष

- **दोहरी भूमिका एवं स्वायत्त राजनीति:** दलित महिलाओं ने मुख्यधारा के कांग्रेस चालित आंदोलनों (असहयोग, सविनय अवज्ञा, भारत छोड़ो) में भागीदारी की, किंतु जब उनके सामाजिक-राजनीतिक अधिकारों की बात आई, तो उन्होंने डॉ. बी.आर. अंबेडकर के अनुसूचित जाति महासंघ (SCF) और पेरियार के 'आत्म-सम्मान आंदोलन' के बैनर तले अपनी पृथक और स्वायत्त राजनीतिक पहचान दर्ज कराई।
- **जाति और जेंडर का अंतर-संबद्ध मंच (Intersectionality):** मीनाबाल शिवराजन, शांताबाई दाणी, राधाबाई कांबले और सुलोचनाबाई डोंगरे जैसी नेताओं ने राजनीति विज्ञान के 'अंतर-अनुभागीयता' सिद्धांत का व्यावहारिक उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि दलित महिला की समस्या को केवल 'महिला' या केवल 'दलित' के दायरे में अलग करके नहीं समझा जा सकता।
- **संवैधानिक एवं राजनीतिक मांगों का प्रभाव:** 1942 के नागपुर सम्मेलन में पारित प्रस्तावों—जैसे वयस्क मताधिकार, समान काम के लिए समान वेतन, निःशुल्क व अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, और विधायिकाओं में महिलाओं हेतु प्रतिनिधित्व—ने स्वतंत्र भारत के संविधान (अनुच्छेद 14, 15, 17, 39 और 326) के निर्माण में वैचारिक पृष्ठभूमि का कार्य किया।

व्यावहारिक एवं अकादमिक सुझाव (Recommendations / Suggestions)

शोध के प्राप्त आंकड़ों और निष्कर्षों के आधार पर आधुनिक राजनीति विज्ञान, इतिहासलेखन और नीति-निर्माण के क्षेत्र के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं:

1. पाठ्यक्रम एवं इतिहासलेखन का पुनर्मूल्यांकन (Revision of Curriculum & Historiography)

- **पाठ्यपुस्तकों में समावेश:** उच्च शिक्षा तथा माध्यमिक स्तर के राजनीति विज्ञान और इतिहास के पाठ्यक्रमों में दलित महिला नेताओं (जैसे—मीनाबाल शिवराजन, शांताबाई दाणी) के राजनीतिक योगदान को मुख्यधारा के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए।
- **सबाल्टर्न इतिहासलेखन का प्रोत्साहन:** विश्वविद्यालयों और शोध संस्थानों द्वारा 'नीचे से इतिहास' (History from Below) तथा दलित नारीवादी परिप्रेक्ष्य (Dalit Feminist Standpoint) पर केंद्रित प्राथमिक शोध परियोजनाओं को बढ़ावा दिया जाए।

2. अभिलेखीय साक्ष्यों का संरक्षण एवं दस्तावेजीकरण (Archival Preservation)

- **प्राथमिक स्रोतों का डिजिटलीकरण:** स्वतंत्रता पूर्व की दलित पत्र-पत्रिकाओं (*जनता*, *बहिष्कृत भारत*, *मूकनायक*, *कुडी अरासु*) में प्रकाशित दलित महिलाओं के भाषणों, प्रस्तावों और डायरियों का डिजिटल संग्रह (Digital Archive) तैयार किया जाए।
- **मौखिक इतिहास (Oral History) का संकलन:** स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाली दलित महिला कार्यकर्ताओं के परिवारों के पास उपलब्ध अप्रकाशित दस्तावेजों और स्मृतियों को लिपिबद्ध किया जाए।

3. आधुनिक नीति-निर्माण एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व हेतु (For Modern Policy-Making)

- **नीतिगत निर्माण में अंतर-अनुभागीय दृष्टिकोण:** सरकार द्वारा महिला सशक्तिकरण की नीतियां बनाते समय 'अंतर-अनुभागीयता' (Intersectionality) के सिद्धांत को लागू किया जाए, ताकि सबसे निचले पायदान पर स्थित दलित और वंचित वर्ग की महिलाओं तक योजनाओं का प्रत्यक्ष लाभ पहुंचे।

- संसदीय एवं स्थानीय निकायों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व: जिस प्रकार 1942 के सम्मेलन में दलित महिलाओं ने राजनीतिक प्रतिनिधित्व की मांग रखी थी, उसी प्रकार आधुनिक लोकतांत्रिक संस्थाओं (संसद, विधानसभाओं और पंचायतों) में दलित महिलाओं के पर्याप्त और प्रभावी प्रतिनिधित्व की व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिए।

अंतिम निष्कर्ष

संक्षेप में, राष्ट्रीय आंदोलन में दलित महिलाओं का योगदान केवल एक ऐतिहासिक घटनाक्रम नहीं था, बल्कि यह आधुनिक भारत के समावेशी लोकतंत्र, नागरिक अधिकारों, और सामाजिक-राजनीतिक चेतना का मुख्य प्रेरक बल था। उनके संघर्षों को रेखांकित किए बिना भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का राजनीतिक विश्लेषण अधूरा और एकांगी ही रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची (References)

- ओमवेड, गेल. (1994). *दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रिवोल्यूशन: डॉ. अंबेडकर एंड द दलित मूवमेंट इन कोलोनीयल इंडिया*. सेज पब्लिकेशंस.
- पवार, उर्मिला, एवं मून, मीनाक्षी. (1989). *आम्हीही इतिहास घडवला* (हिन्दी अनुवाद: हमने भी इतिहास बनाया: अंबेडकरी आंदोलन में महिलाओं की भूमिका). सुगम प्रकाशन.
- रीगे, शर्मिला. (2006). *राइटिंग कास्ट/राइटिंग जेंडर: नरेटिंग दलित विमेंस टेस्टीमोनीज़*. जुबान पब्लिकेशंस.
- ज़ेलियट, इलेन. (1996). *फ्रॉम अनटचेबल टू दलित: एसेज ऑन द अंबेडकर मूवमेंट*. मनोहर प्रकाशक.
- गुहा, रंजीत. (1982). *सबआल्टर्न स्टडीज I: राइटिंग्स ऑन साउथ एशियन हिस्ट्री एंड सोसाइटी*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
- स्पिवाक, गायत्री चक्रवर्ती. (1988). *कैन द सबआल्टर्न स्पीक?*. इन सी. नेलसन एवं एल. ग्रॉसबर्ग (संपादक), *मार्क्सिज्म एंड द इंटरप्रिटेशन ऑफ कल्चर* (पृ. 271-313). यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनोइस प्रेस.
- गुरु, गोपाल. (1995). दलित विमेन टॉक डिफरेंटली. *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 30(41/42), 2548-2550.
- क्रैनशॉ, किम्बरले. (1989). डिमार्जिनालाइजिंग द इंटरसेक्शन ऑफ रेस एंड सेक्स: ए ब्लैक फेमिनिस्ट क्रिटिक ऑफ एंटीडिस्क्रिमिनेशन डॉक्ट्रिन, फेमिनिस्ट थ्योरी एंड एंटीरासिस्ट पॉलिटिक्स. *यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो लीगल फोरम*, 1989(1), 139-167.
- राव, अनुपमा. (2003). जेंडरिंग कास्ट: कंटेंपरेरी फेमिनिस्ट स्टडीज. *जर्नल ऑफ साउथ एशियन डेवलपमेंट*, 18(2), 121-142.
- ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस विमेन कॉन्फ्रेंस. (1942). *कार्यवाही एवं पारित प्रस्ताव रिपोर्ट (20-22 जुलाई 1942, नागपुर)*. अनुसूचित जाति महासंघ (SCF) अभिलेख, बंबई.
- बॉम्बे प्रेसीडेंसी पुलिस रिकॉर्ड्स. (1927). *महाड सत्याग्रह और चवदार तालाब आंदोलन संबंधी रिपोर्ट (गृह विभाग - विशेष शाखा)*. महाराष्ट्र राज्य अभिलेखागार, मुंबई.

- जनता एवं बहिष्कृत भारत. (1927-1944). डॉ. बी.आर. अंबेडकर द्वारा संपादित समाचार पत्रों में दलित महिला सम्मेलनों के प्रकाशित विवरण एवं भाषण. अंबेडकर वांग्मय संग्रह, महाराष्ट्र सरकार.
- आनंद, एस. (2005). भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में दलित महिलाओं का अदृश्य योगदान. *इकोनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली*, 40(12), 1120-1128.



EARN YOUR

MBA

WWW.IIMPS.IN



Accreditation & Ranking



UGC / NCTE Approved.

INFO@IIMPS.IN

☎ 011-41005174

RESEARCH GATEWAY

STOP PLAGIARISM



Arogyam Ayurveda
Holistic Healing through herbs



AROGYAM ONLINE

PARIVARTAN PSYCHOLOGY CENTER

परिवर्तन

COLOR PSYCHOLOGY : HOW COLOR AFFECT YOUR CHILD



BLUE

Calms your Child's Mind & Body

YELLOW

Promotes Concentration, Stimulates the Memory

PINK

Evokes Empathy, makes your Child Calm

RED

Excites and energizes your Child's body

GREEN

Improves Reading speed and Comprehension

www.parivartan4u.com



परिवर्तन

Confuse about your children's future?

भारतीय भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं शोध

ISSN 2321 – 9726

WWW.BHARTIYASHODH.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SCIENCE & TECHNOLOGY**

ISSN – 2250 – 1959 (O) 2348 – 9367 (P)

WWW.IRJMSST.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
COMMERCE, ARTS AND SCIENCE**

ISSN 2319 – 9202

WWW.CASIRJ.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT SOCIOLOGY & HUMANITIES**

ISSN 2277 – 9809 (O) 2348 - 9359 (P)

WWW.IRJMSH.COM



**INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF SCIENCE
ENGINEERING AND TECHNOLOGY**

ISSN 2454-3195 (online)

WWW.RJSET.COM



**INTEGRATED RESEARCH JOURNAL OF
MANAGEMENT, SCIENCE AND INNOVATION**

ISSN 2582-5445

WWW.IRJMSI.COM



**JOURNAL OF LEGAL STUDIES, POLITICS
AND ECONOMICS RESEARCH**

WWW.JLPER.COM

JLPE